आर्थिक महत्व की प्रजातियों बीजा, धावड़ा एवं अचार में होने वाले रोगों का समेकित प्रबंधन एवं तकनीक मार्गदर्शिका

डॉ. धर्मेन्द्र वर्मा

डॉ. ज्योति सिंह

श्रीमती अनुपमा गोस्वामी

वन पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण शाखा
राज्य वन अनुसंधान संस्थान
पोलीपाथर, जबलपुर (म.प्र.) 482008

2017

प्रस्तावना

हमारे दैनिक जीवन में आर्थिक महत्व के वृक्षों जैसे बीजा, धावड़ा एवं अचार के वृक्षों का बहुत महत्व है क्योंकि हमारे अधिकतर भोज्य पदार्थ, कपड़े, भवन निर्माण सामग्री एवं हमारे दैनिक उपयोग की सभी सामग्री पौधों से प्राप्त होती है। कवकों द्वारा इन सभी आर्थिक महत्व वाले वृक्षों की उत्पादकता में कमी आ जाती है तथा इनसे होने वाले लाभ में कमी आ जाती है अर्थात् प्रस्तावित लाभ नहीं मिल पाता है। अतः इन कवकों को पहचानकर उनकी रोकथाम के उपाय करना अत्यंत आवश्यक है।

ये प्रजातियां (बीजा, धावड़ा एवं अचार) कृषि उद्देश्य एवं सामाजिक उद्देश्य से लगाई जाने वाली प्रमुख प्रजातियां हैं। आर्थिक महत्व के वृक्षों में इनका स्थान महत्वपूर्ण है जैसे– (1) बीजा आर्थिक महत्व के साथ चिकित्सा के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसकी लकड़ी का उपयोग मधुमेह के उपचार में किया जाता है। यह एक पर्णपाती वृक्ष है। यह रेतीली मिट्टी में अच्छी वृद्धि करता है। (2) धावड़ा मध्यम से वृहद् आकार का वृक्ष होता है। यह आमतौर पर सूखे एवं आर्द्र वनों में पाया जाता है। धावड़ा से बहुत ही महत्वपूर्ण एवं आर्थिक महत्व का गोंद प्राप्त होता है। (3) अचार मध्यम आकार का गोलाकार छत्र वाला वृक्ष है जो मध्यप्रदेश के सभी जिलों में पाया जाता है। इससे खाद्य सामग्री के साथ–साथ फर्नीचर एवं भवन निर्माण के लिये लकड़ी प्राप्त होती है। विभिन्न स्थानों के क्षेत्रीय सर्वेक्षण (field survey) के दौरान इन वृक्षों के रोगों का विस्तृत अध्ययन किया गया है। ये रोग विभिन्न प्रकार के कवकों द्वारा उत्पन्न होते है जिससे वृक्षों को आर्थिक रूप से बहुत हानि पहुंचाते हैं तथा उनकी उत्पादकता में कमी होती है। कवकनाशी के प्रयोग एवं उचित प्रबंधन तकनीकों के द्वारा इन रोगों से होने वाली हानि को कम किया जा सकता है।

प्रस्तुत मार्गदर्शिका में बीजा, धावड़ा एवं अचार में पायी जाने वाली बीमारियों तथा उनके रोकथाम के उपायों का विस्तृत वर्णन किया गया है तथा क्षेत्रीय स्तर पर विभागीय अमला लाभप्रद हो सके यह प्रयास किया गया है।

इस कार्य हेतु अपर प्रधान मुख्य वन संरक्षक (अनुसंधान, विस्तार एवं लोकवानिकी) मध्यप्रदेश, भोपाल के हम आभारी है कि उन्होंने इस कार्य हेतु वित्तीय सहायता उपलब्ध करायी है। इस कार्य हेतु पाठ्य सामग्री का संकलन डॉ. ज्योति सिंह द्वारा किया गया है। इस कार्य हेतु सहयोग श्रीमति अनुपमा गोस्वामी, जे.आर.एफ. द्वारा किया गया है।

डॉ. धर्मेन्द्र वर्मा (भा.व.से.)
संचालक
राज्य वन अनुसंधान संस्थान
जबलपुर (म.प्र.)

आर्थिक महत्व की प्रजातियों बीजा, धावड़ा एवं अचार में होने वाले रोगों का समेकित प्रबंधन एवं तकनीक

परिचय :–

हमारे दैनिक जीवन में आर्थिक महत्व के वृक्षों जैसे बीजा, धावड़ा एवं अचार के वृक्षों का बहुत महत्व है क्योंकि हमारे अधिकतर भोज्य पदार्थ, कपड़े, भवन निर्माण सामग्री एवं हमारे दैनिक उपयोग की सभी सामग्री पौधों से प्राप्त होती है। कवकों द्वारा इन सभी आर्थिक महत्व वाले वृक्षों की उत्पादकता में कमी आ जाती है तथा इनसे होने वाले लाभ में कमी आ जाती है अर्थात् प्रस्तावित लाभ नहीं मिल पाता है। अतः इन कवकों को पहचानकर उनकी रोकथाम के उपाय करना अत्यंत आवश्यक है।

ये प्रजातियां (बीजा, धावड़ा एवं अचार) कृषि एवं सामाजिक उद्देश्य से लगाई जाने वाली प्रमुख प्रजातियां हैं। आर्थिक महत्व के वृक्षों में इनका स्थान महत्वपूर्ण है जैसे–

(1) बीजा आर्थिक महत्व के साथ चिकित्सा के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसकी लकड़ी का उपयोग मधुमेह के उपचार में किया जाता है। यह एक पर्णपाती वृक्ष है। यह रेतीली मिट्टी में अच्छी वृद्धि करता है।

(2) धावड़ा मध्यम से वृहद् आकार का वृक्ष होता है। यह आमतौर पर सूखे एवं आर्द्र वनों में पाया जाता है। धावड़ा से बहुत ही महत्वपूर्ण एवं आर्थिक महत्व का गोंद प्राप्त होता है।

(3) अचार मध्यम आकार का गोलाकार छत्र वाला वृक्ष है जो मध्यप्रदेश के सभी जिलों में पाया जाता है। इससे खाद्य सामग्री के साथ–साथ फर्नीचर एवं भवन निर्माण के लिये लकड़ी प्राप्त होती है। विभिन्न स्थानों के क्षेत्रीय सर्वेक्षण (field survey) के दौरान इन वृक्षों के रोगों का विस्तृत अध्ययन किया गया है। ये रोग विभिन्न प्रकार के कवकों द्वारा उत्पन्न होते हैं जिससे वृक्षों को आर्थिक रूप से बहुत हानि पहुंचाते हैं तथा उनकी उत्पादकता में कमी होती है। कवकनाशी के प्रयोग एवं उचित प्रबंधन तकनीकों के द्वारा इन रोगों से होने वाली हानि को कम किया जा सकता है।

बीजा (*Pterocarpus marsupium*)

- **परिचय :–**

बीजा में पायी जाने वाली बीमारियों तथा उनका निदान विषय का विस्तृत वर्णनः–

❖ बीजा लेग्यूमिनोसी परिवार का सदस्य है। स्थानीय भाषा में इसे बीजासार कहा जाता है। बीजा औषधीय व वानिकी के उद्देश्य से लगाया जाने वाला प्रमुख वृक्ष है।

❖ यह बड़े आकार का पर्णपाती वृक्ष है। इसकी छाल भूरे रंग की होती है तथा हार्डवुड गोल्डन रंग की होती है।

❖ इसका पुष्पन जून से सितम्बर के मध्य होता है। फल दिसम्बर माह से लगना आरंभ होते हैं तथा अप्रैल से मई माह के मध्य फल पककर तैयार हो जाते हैं।

उपयोग :–

इसकी लकड़ी का उपयोग भवन निर्माण, फर्नीचर, बैलगाड़ी की धुरी आदि कार्यों में किया जाता है। इसकी छाल का उपयोग मधुमेह में किया जाता है। खून संबंधी बीमारी, बदहजमी आदि में भी इसका उपयोग किया जाता है।

धावड़ा (Anogeissus latifolia)

परिचय :–

❖ यह कॉम्ब्रीटेसी परिवार का सदस्य है। इसे स्थानीय भाषा में धवा, धावड़ा कहा जाता है।

❖ इसे गमहादी गोंद के नाम से भी जाना जाता है।

❖ यह मध्यम से बड़े आकार का वृक्ष होता है। इसकी छाल सफेदी लिए गोल चकतों वाली होती है।

❖ इसका छत्र गोलाकार तथा पतली टहनियां होती हैं। यह आमतौर पर सूखे एवं आर्द्र वनों में पाया जाता है।

❖ इसमें पुष्पन जून से सितम्बर तक होता है तथा फल फरवरी से मार्च में पककर तैयार हो जाते हैं।

❖ इससे प्राप्त गोंद का उपयोग खाद्य पदार्थों में किया जाता है।

❖ यह गोंद का सर्वाधिक उत्तम स्त्रोत है।

उपयोग :–

इसका उपयोग फर्नीचर, नाव, गाड़ी की धुरी आदि बनाने में किया जाता है। यह चारकोल का अच्छा स्त्रोत है। धावड़ा एक बहुत अच्छा ईंधन का काम भी करता है। इसका गोंद बहुत महत्वपूर्ण होता है। इसे शक्तिवर्धक व गर्म प्रकृति का माना जाता है। औषधीय दवाओं, प्रिंटिंग प्रेस आदि में भी इसका उपयोग होता है।

अचार (*Buchanania lanzan*)

परिचय :–

यह एनाकॉर्डियेसी परिवार का महत्वपूर्ण सदस्य है। इसे स्थानीय भाषा में चार, अचार, चिरौंजी, या चारौली कहा जाता है।

- ❖ यह मध्यम आकार का पर्णपाती वृक्ष है।
- ❖ यह मध्यप्रदेश के सभी जिलों में पाया जाता है।
- ❖ इसकी छाल भूरी और गहरे काले रंग की होती है। यह कुछ–कुछ मगरमच्छ की खाल की तरह दिखता है।
- ❖ इसमें पुष्पन जनवरी से मार्च तक होता है तथा फल अप्रैल से जून तक उपलब्ध रहते हैं।

उपयोग :–

इससे प्राप्त बीजों का उपयोग खाद्य पदार्थों में किया जाता है। इसे बादाम की जगह उपयोग किया जाता है। इसके बीज से निकले तेल का उपयोग बादाम के तेल के स्थान पर किया जाता है।

बीजा, धावड़ा और अचार में होने वाले कुछ सामान्य रोग :–

- ❖ पादप रोगों का अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण होता है क्योंकि हमारे अधिकतर भोज्य पदार्थों, दैनिक उपयोग की वस्तुएं, कपड़े, भवन, निर्माण सामग्री इत्यादि पौधों से प्राप्त होते हैं। कवकों व अन्य रोगों द्वारा आर्थिक महत्व वालें वृक्षों की उत्पादकता में कमी आ जाती है जिससे वांछित लाभ नहीं मिल पाता है। अतः कवकों को पहचानकर उनकी रोकथाम के उपाय करना अत्यंत आवश्यक है।
- ❖ फील्ड पर इन वृक्षों का अध्ययन किया गया। इससे इनमें होने वाले रोगों का पता चला। इन रोगों के कारण वृक्षों की उत्पादकता एवं उपयोगिता पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इन रोगों के

कारण इन वृक्ष प्रजातियों की पारिस्थितिकीय एवं आर्थिक रूप से काफी हानि हुई है। ये रोग विभिन्न प्रकार के कवकों द्वारा उत्पन्न होते हैं। उचित समेकित प्रबंधन तथा कवकनाशी के प्रयोग से इन रोगों से होने वाली क्षति को कम किया जा सकता है।

- ❖ इसमें सफेद सड़न व भूरी सड़न वाले फफूंद देखे गये हैं।
- ❖ इन वृक्षों में पर्णदाग रोग (लीफ स्पॉट), पर्णलक्ष्म रोग, पत्तियों का धब्बा रोग, प्ररोह अंगमारी, बीजजनित रोग, जड़ सड़न, हार्ट राट, लकड़ी छेदक, तना संक्रमण रोग (केंकर रोग) आदि देखे गये हैं।
- ❖ पत्तियों की ऊपरी व निचली स्तर पर पावडर जैसी रचना दिखाई देती है जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया नहीं होती है। अतः पौधा कमजोर होकर मर जाता है।
- ❖ **चित्र क्रमांक–1** में निम्न कवकों के कारण धावड़ा, अचार एवं बीजा में होने वाले विभिन्न रोग के लक्षणों को नीचे चित्रों द्वारा प्रदर्शित किये गये हैं।

चित्र क्रमांक– (1)

धावड़ा

बीजा

अचार

❖ **चित्र क्र.–2** में **मिट्टी के नमूने और पत्ते के नमूने का संग्रहण** नीचे चित्रों द्वारा प्रदर्शित किये गये हैं।

रोगग्रसित होने के कारण

पौधों के रोगग्रसित होने के कारण निम्न हैंः–

(अ) अजैविक कारण

- प्रकाश की कमी की अधिकता
- ऑक्सीजन की कमी
- वायु प्रदूषण
- अत्यधिक या कम आर्द्रता
- अत्यधिक कम या अत्यधिक तापमान
- पौधों की वृद्धि हेतु आवश्यक पोषक तत्वों की कमी
- भूमि की अम्लीयता या क्षारीयता

(ब) जैविक कारण

- सूक्ष्मकृमि द्वारा
- फफूंदों द्वारा
- बैक्टीरिया द्वारा
- वाइरस द्वारा
- कीटों द्वारा
- मनुष्यों द्वारा
- अत्यधिक चराई द्वारा

अजैविक व जैविक कारण दोनो ही पौधों की वृद्धि को हानि पहुंचाते हैं एवं उनमें रोग उत्पन्न करते हैं।

आर्थिक महत्व की प्रजाति (बीजा, धावड़ा व अचार) के कुछ प्रमुख रोग एवं उनके रोकथाम के उपाय निम्न हैंः–

a) जड़ गलन रोग

सूक्ष्मकृमि व फफूंदों द्वारा जड़ें खोखली हो जाती हैं तथा संग्रहित पदार्थ सड़ने लगता है। अन्ततः पौधा सूख जाता है। यह रोग दलदली भूमि में अधिक पाया जाता है। नमी की अधिकता,

पर्याप्त प्रकाश नहीं होना, मृदा में कार्बनिक पदार्थों की अधिकता से यह रोग फैलता है। पीरिया राइजोमारफा जड़ सड़न का मुख्य कारक है। यह सड़ी हुई वनस्पति पर जीने वाला फफूंद है। यह जड़ों में भूरी सड़न पैदा करता है जिससे पौधा सड़ जाता है और अंत में नष्ट हो जाता है।

उपचार

1) पौधों के आसपास पानी नहीं भरा होना चाहिए, पानी निकासी की व्यवस्था उत्तम होनी चाहिए।
2) बेवेस्टिन 0.2 प्रतिशत का घोल संबंधित पौधों की जड़ों में छिड़काव करने से लाभ होता है।

b) प्ररोह अंगमारी

इस रोग में पौधे की अग्र टहनियां सूख जाती हैं। टहनियों पर काले पिन के आकार की आकृतियां दिखाई देती हैं। यह रोग ऊपर से नीचे की ओर टहनियों पर फैलता है। सूखी पत्तियां टहनियों पर लटकती दिखाई देती हैं।

उपचार

डायथेन एम–45 का छिड़काव वृक्षों के तनो, शाखाओं पर करने से लाभ मिलता है तथा बीमारी का फैलाव भी रूक जाता है।

c) तना संक्रमण या विकृति रोग (केंकर रोग)

इस रोग के कारण छाल में फटन तथा काले धब्बे, विकृति तथा रस का टपकना आदि होते हैं। प्रभावित वृक्ष विभिन्न स्तरों तक निश्तेज हो जाते हैं। यह रोग मुख्यतः तने एवं टहनियों को प्रभावित करता है। इस रोग के कारण टहनियों तथा मुख्य तने पर छाल के कटने एवं गठानों जैसे लक्षण दिखाई देते हैं। प्रभावित पौधा ग्लानता के लक्षण प्रकट करता है और बाद में सूख जाता है। कभी–कभी वृक्षों में कम विकसित टहनियां भी निकलने लगती है।

उपचार

फंगस नाशक डायथेन एम–45 छिड़काव करने से लाभ होता है। जैविक नियंत्रको में आंवला एवं नीम केक ने भिन्न प्रतिरोध प्रदर्शित किया है। औषधीय पौधों की पत्तियों का अर्क उपयोग करने से अच्छे परिणाम प्राप्त हुए। सूखे वृक्षों और टहनियों को जला देना चाहिए जिससे फील्ड में बीमारी के बीजाणुओं की मात्रा को कम किया जा सके।

d) आर्द्रपतन रोग

यह रोग फ्यूजेरियम ऑक्सीपोरम नामक फफूंद के संक्रमण से होता है। यह रोग रोपणियों में मुख्यतः पाया जाता है। इस रोग के कारण मृदा की सतह के समीप पौधे के तने पर जल अवशोषित क्षेत्र बन जाता है जिससे पौधे के तने के ऊतक क्षीण हो जाते हैं। फलस्वरूप पौधे की मृत्यु हो जाती है। यह रोग भूमि में नमी की मात्रा अधिक होने पर तीव्रता से फैलता है।

उपचार

बेवेस्टिन 0.3 प्रतिशत का घोल बनाकर रोपणियों अथवा ग्रसित वृक्षों की जड़ों में छिड़काव करने से लाभ होता है। मृदा में पानी की नियंत्रित मात्रा का ही उपयोग करना चाहिए। सिंह इत्यादि (2003) ने ट्राइकोडर्मा नामक कवक द्वारा जैविक रोकथाम तकनीकी से पौध शालाओं में इस रोग को बचाने के सुझाव।

e) पर्णदाग / पर्णलक्ष्म / पत्तियों का धब्बा रोग

इन तीनों वृक्षों (बीजा, धावड़ा, अचार) की पत्तियों में पर्णदाग रोग मुख्यतः पिस्टेलोटियोप्सीस वरसिकोलर अल्टरनेरिया कखुलेरिया ल्यूनाटा, डिप्लोडिया नामक फफूंद से होता है। इस रोग के कारण पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के गोल व कोणीय धब्बे बनते हैं जो कि पुरानी नीचे वाली पत्तियों से नई पत्तियों की ओर बढ़ने लगते हैं। शुष्क जलवायु में ये धब्बे नेक्रोटिक हो जाते हैं तथा पत्तियों की सतह पर छोटी काली विकनीडिया दिखाई देने लगती है।

उपचार

इस रोग से बचाव के लिये बेवेस्टिन या डायथिन एम–45 का 0.3 प्रतिशत का घोल 15 दिन के अंतराल में छिड़काव करना चाहिये। जैविक नियंत्रण हेतु नीम केक का घोल बनाकर डालना चाहिए।

f) पत्तियों का चूर्णिल असित रोग

इस रोग के कारण नई आने वाली पत्तियां, अग्र कलिका संक्रमित हो जाती हैं। पत्तियों पर पावडर की परत दिखाई देने लगती है जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया पर विपरीत प्रभाव पड़ता है एवं पत्तियां सूखने लगती हैं जिसके कारण धीरे–धीरे पूरा पौधा सूख जाता है।

उपचार

बेवेस्टिन तथा सलफेक्स 0.3 प्रतिशत का छिड़काव करना लाभप्रद होता है।

g) बीज जनित रोग

कुछ फफूंद बीजों को नुकसान पहुंचाते हैं जिससे उनका अंकुरण सही नहीं हो पाता है। बीज इकट्ठा करने के पश्चात किसी भी डिटरजेंट से धोकर अच्छी तरह सुखाकर, साफ एवं सूखी जगह संग्रहण करना चाहिए ताकि बीजजनित रोग अंकुरण को बाधा न पहुंचायें।

उपचार

बीज को फफूंदनाशक दवा जैसथायरम या मेनको जेब या कार्बेनडॉजिम की 3g दवा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिये।

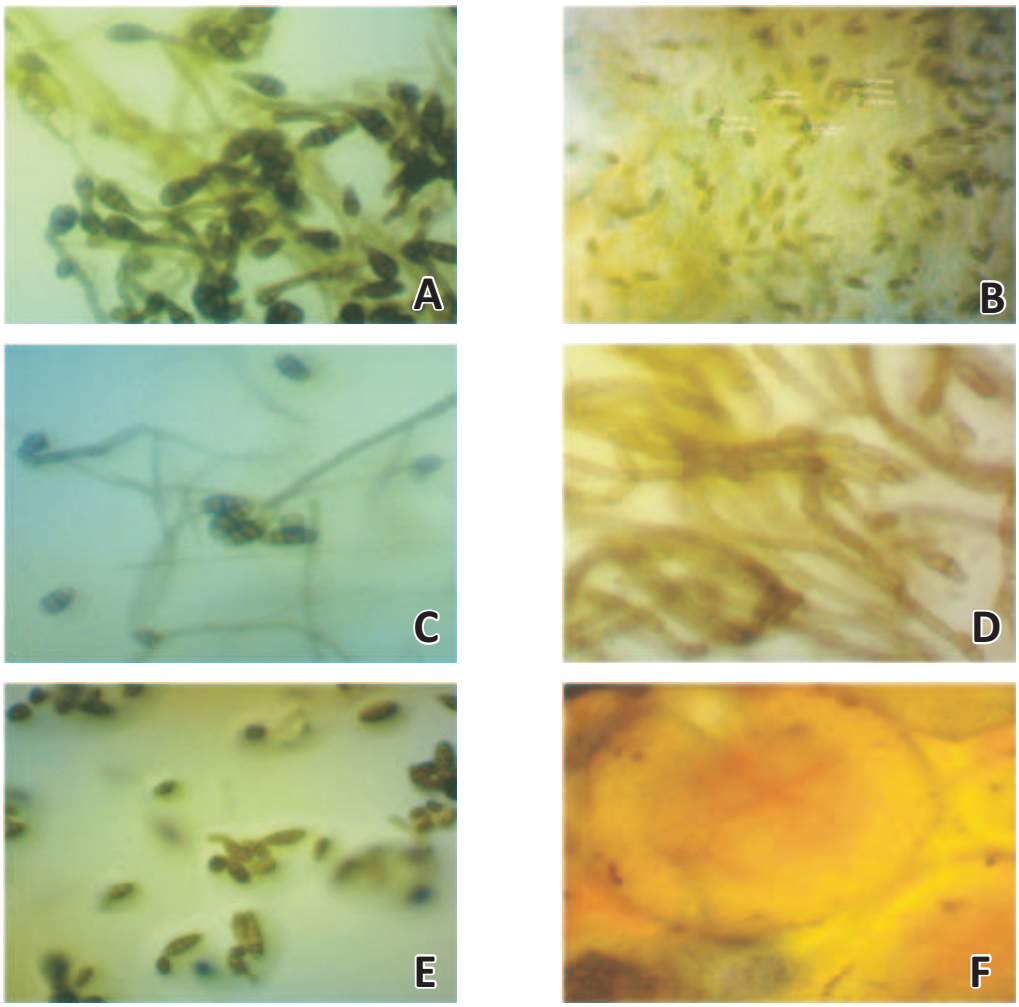

चित्र क्रमांक–3 (ए) अलेंटरिया सोनची (बी) पेस्टलियोपीप्स वर्लिकलॉर (सी) कर्व्युलरिया लंटा (डी) रेहोजोक्टोनिया सोलानी (ई) अल्टर्नेरिया प्रजाति (एफ) ग्लोमस कैलेडोनियम।

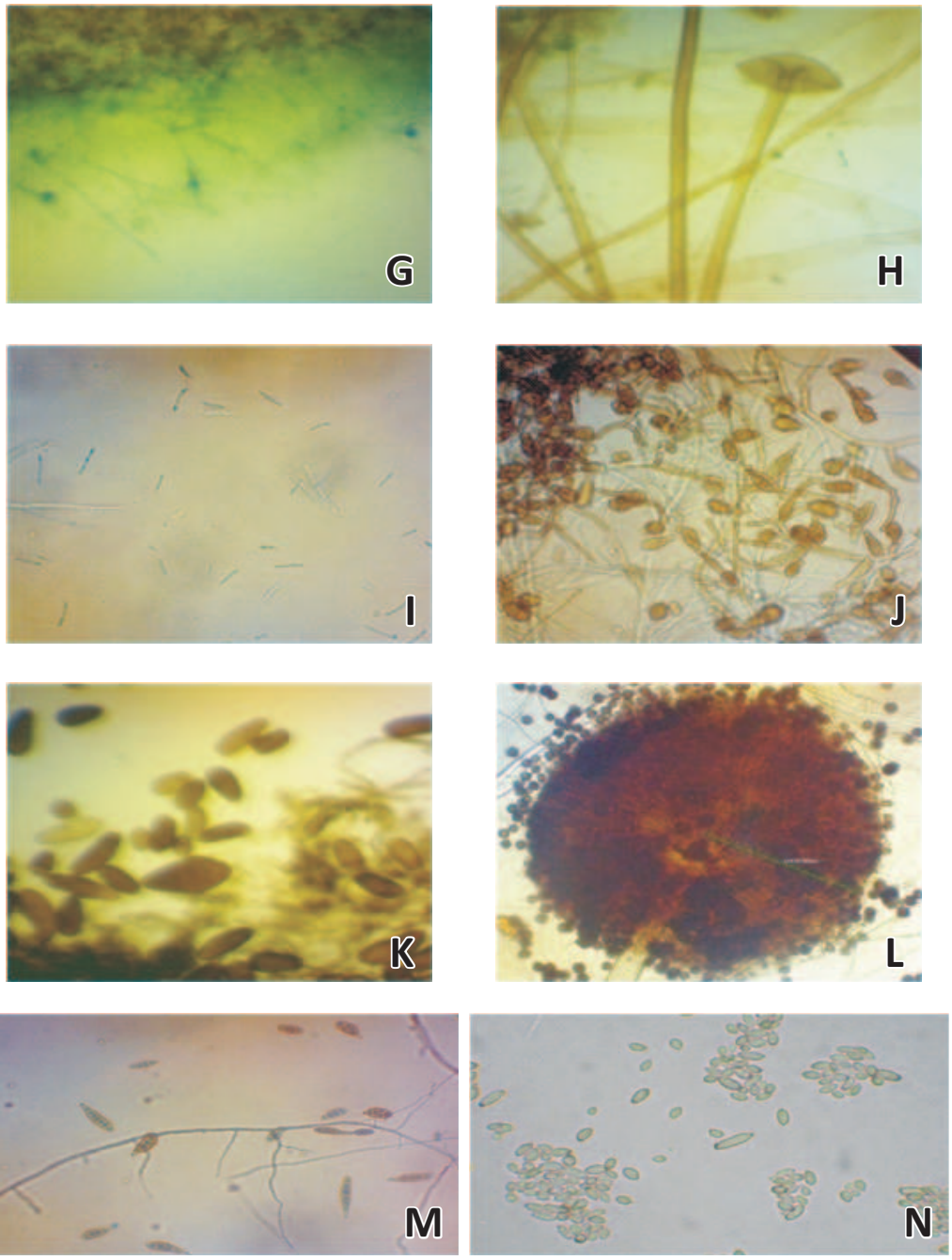

(जी) पेनिसिलीन नोटम (एच) राइजापोस स्टोलोनिफर (आइ) फ्यूजारियम ऑक्सीसोरम्म (जे) अलेंटरिया लॉलीपेज (के) डीप्लोडिया (एल) एस्परजिलस नाइजर। (एम) एक्सएसरोहिलुम रोस्टराटम, (एन) क्लैडोस्पोरियम बैटोटिकोला।

रोग प्रबंधन रणनीति – परिणाम एवं परिचर्चा

फील्ड में रोग प्रबंधन के उपाय निम्न लिखित हैंः–

- रोग जनकों को हटाने के लिये प्रभावित क्षेत्रों से मृत एवं सूखे वृक्षों को हटाना।
- प्रभावित या मृत वृक्षों को प्रभावित क्षेत्रों से हटाकर लकड़ी को इमारती या जलाऊ लकड़ी के रूप में उपयोग किया जा सकता है तथा इस प्रकार कवकों का प्रभाव कम किया जा सकता है।
- प्रायोगिक स्थल में चयनित झाड़ियों एवं बांस से सुरक्षा प्रदान की जा सकती है। उक्त स्थल पर मिश्रित प्रजातियों का रोपण भी किया जा सकता है।
- फील्ड में जैविक प्रभाव, चराई, मानवीय गतिविधियों से वृक्ष सूख जाते हैं इसलिये जैविक गतिविधियों से होने वाले हानिकारक प्रभावों को रोकने के लिये चयनित स्थल या फील्ड को कुछ समय के लिये प्रतिबंधित कर देना चाहिए। इस तरह चराई कम होने से मृदा क्षरण, मृदा की आर्द्रता तथा पोषक तत्व की उचित मात्रा को व्यवस्थित रखा जा सकता है।
- लेंटाना कांटेदार झाड़ियां एवं जिजीपस प्रजाति इत्यादि इन स्थलों में पाये गये हैं जिससे यह प्रदर्शित होता है कि इन स्थलों में नमी हो जाती है जिससे वृक्षों की वृद्धि प्रभावित होती है।
- फील्ड में वृक्षों की वृद्धि एवं विभिन्न अवस्थाओं का समय–समय पर सर्वेक्षण किया गया तथा उनमें होने वाले रोगों के लक्षण व हानि का विवरण एकत्र किया गया। रोगग्रसित सामग्री को एकत्र करके प्रयोगशाला में लाकर आइसोलेशन किया। रोगजनक कवकों को पोटेटो डेक्स्ट्रोज अगार माध्यम पर कृत्रिम रूप से उगाया गया तथा उनकी पहचान के लिये उनके अकारिकी व गुण का अध्ययन किया गया इसके लिये मोनोग्राफ एवं अन्य उपलब्ध साहित्य तथा विशेषज्ञों की सहायता ली गई।
- इन स्थलों पर महत्वपूर्ण मृदा माइक्रोफ्लोरा का भी अध्ययन किया गया।
- वर्तमान नमूनों में मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी देखी गई जिससे जड़ों की चयापचय क्रिया में कमी होने के कारण जड़ तंत्र के विकास में कमी हो जाती है। पोषक तत्वों की कमी के कारण एवं मृदा सहजीवी जीवाणु के कारण जड़ क्षय बढ़ जाता है जिस कारण पौधों की मृत्युदर में वृद्धि हो जाती है।

- जैविक खाद, एफ.वाय.एम., रेत, यूरिया, पोटाश इत्यादि को प्रभावित क्षेत्रों में लागू किया जाना चाहिए।
- चूने का पानी, कॉपर सल्फेट एवं पानी (1:1:100) के मिश्रण को प्रभावित वृक्ष के पास गड्ढा (चार–पांच फीट) खोदकर डालने से जड़गलन रोगजनक कारक एवं दीमक के प्रकोप से बचाया जा सकता है।
- पुराने तनों में बोर्डेक्स मिक्सर (नीला थोथा 2किग्रा + बुझा चूना 2किग्रा + 250 लीटर पानी) मिलाकर स्प्रे करने से दीमक व फफूंद आदि का नाश होता है।

जैविक नियंत्रण

पौधों के रोगो में जैविक नियंत्रण जैसे ट्राइकोडर्मा, राइजोबियम, स्ट्रेपटोमाइसिस, वैम का उपयोग करके भी रोगों से बचाव किया जा सकता है तथा पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाई जा सकती है। इसमें नीम केक का उपयोग कारगर है।

रोगग्रस्त पौधों पर औषधीय पौधों के अर्क का प्रभाव

पौधों या वृक्षों की रोगग्रस्त पत्तियों पर कुछ औषधीय पौधों का अर्क प्रयोग किया जाता है जिनमें फफूंदनाशक तत्व पाये जाते हैं। औषधीय पौधों का रक्षात्मक हथियार के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है इनकी पत्तियों का अर्क उपयोग करने से अच्छे परिणाम प्राप्त हुये जो कार्बनिक रसायन के सबसे अच्छे स्त्रोत हैं। परियोजना में कुछ औषधीय पौधों के अर्क को फफूंदों के विकास पर उनके निरोधात्मक प्रभाव पता करने के लिये फूड पॉइजन्स तकनीक (Food Poisoned technique) परीक्षण किया गया। इसमें क्रमशः 5, 10 और 15 प्रतिशत सांर्द्रता में कवक को आदर्श संक्रमण–मुक्त वातावरण में संवर्धन कार्य किया गया। इसमें आंवला, सलई, जंगली तुलसी आदि पौधों की पत्तियों के अर्क का उपयोग किया गया एवं सबसे प्रभावी परिणाम आंवला व नीम केक का पाया गया।

रोगों का रासायनिक नियंत्रण

फील्ड में रोगों के लक्षण दिखाई देते ही फफूंदनाशक दवाइयों का प्रयोग करके रोगों को बढ़ने से रोका जा सकता है। प्रायः बेवेस्टिन, डायथेन एम–45, सल्फेक्स साफ या फाइटोलोन का प्रयोग करके

रोगों को महामारी फैलने से रोका जा सकता है। फफूंदनाशी का प्रयोग करने से पूर्व रोगग्रस्त अथवा मृत वृक्षों को हटा देना चाहिए। रोगी वृक्षों के अवशेषों को जला देना चाहिए। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग अतिआवश्यक होने पर ही करना चाहिए।

रोगों की प्रारंभिक अवस्था में वृक्षों में रोगग्रस्त जड़ों पर 10–15 दिनों के अंतराल पर डायथेन एम–45 व बेवेस्टिन का छिड़काव प्रभावी पाया गया। बीज जनित रोगों से अंकुर की रक्षा के लिये बुवाई से पहले बीजों को बेवेस्टिन–पावडर (0.2 प्रतिशत) के साथ उपचारित करके बोया गया एवं प्रभावी साबित हुआ।

रोगों का समेकित नियंत्रण

रोगों के नियंत्रण के लिये समेकित तकनीक भी प्रभावी साबित हुई। समेकित तकनीक में जैविक व रासायनिक दोनों नियंत्रण सम्मिलित होते हैं। इस तकनीक में जैविक तत्व व रासायनिक तत्व को मिश्रित करके रोगग्रसित वृक्षों के लिये उपयोग किया जाता है। रासायनिक तत्व के साथ जैविक तत्व मिश्रित होने के कारण वृक्षों व पौधों को हानि नहीं होती है। समेकित नियंत्रण के लिये बेवेस्टिन व आंवला की पत्तियां और डायथेन एम–45 व नीम केक का मिक्सर वृक्षों की जड़ों में दिया गया तथा इनका स्प्रे किया गया जो कि रोगों की रोकथाम के लिये प्रभावी साबित हुआ।

कल्चर विधियाँ

वृक्षों को रोगों से बचाने के लिये निम्नलिखित उपाय भी लाभकारी हैंः–

1. वृक्षों को क्षतिग्रस्त होने से बचाना चाहिए। उनका सतत् अध्ययन किया जाना चाहिए।
2. पानी निकासी की उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए।
3. बीज संग्रहण स्थान–स्वच्छ भरपूर सूर्य का प्रकाश, हवा की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए। बीज हमेशा स्वस्थ ही उपयोग करना चाहिए।

विस्तार पत्रिका क्र. 52

मार्गदर्शिका

आर्थिक महत्व की प्रजातियों बीजा, धावड़ा एवं अचार में होने वाले रोगों का समेकित प्रबंधन एवं तकनीक

वन पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण शाखा
राज्य वन अनुसंधान संस्थान
पोलीपाथर, जबलपुर (म.प्र.) 482008
(An ISO 9001: 2008 Certified institute and accredited by QCI/NABET)

2017